International Journal of Creative Research Thoughts
Volume 1, Issue.5, May 2013
ISSN:-2320-2882

ORIGINAL ARTICLE

भक्तिकालीन साहित्यिक जागरण

अजीत कुमार द्विवेदी , संदीप कुमार नामदेव

पी–एच.डी. शोधार्थी
अ.प्र. सिंह वि.वि. रीवा (म.प्र.)

सार :

भक्तिकाल हिन्दी साहित्य का स्वर्ण युग है। इस युग में लिखा गया साहित्य उच्चकोटि का था, क्योंकि इसमें भक्ति एवं जागरण दोनों का समन्वय था। भक्तिकालीन साहित्यक जागरण में संत कवियों के हृदय की पवित्रता एवं विचारों की उदात्तता प्रकट हुई है। मनुष्य ने अपने आत्म की सुचिता एवं समाज को विकास के लिए भक्ति का सहारा लिया। भक्ति भावना आने से मनुष्य में सद्भावना का विकास हुआ। भक्ति की दोनों धाराओं ने मनुष्यों में ईश्वरीय भक्ति एवं चेतना का बीजारोपण किया। साहित्य में राष्ट्र तथा समाज को बदलने की शक्ति निहित होती है। भक्तिकालीन सभी संतों ने मनुष्य की मुक्ति का मार्ग खोजा तथा एक आदर्श समाज एवं रामराज्य की कल्पना की। संतों ने तत्कालीन समाज में व्याप्त बुराईयों, ऊँच–नीच का भेदभाव, छुआ–छूत का भेदभाव को दूर करने का हर संभव प्रयत्न किया। मध्य युग में निर्गुण धारा के कवियों की स्वच्छ आंतरिक सोच के चलते समाज में बहुत सुधार हुआ। नामदेव, कबीर तथा रैदास आदि संतों की अमृतवाणी से आज संपूर्ण विश्व आलोकित हो रहा है जिसके परिणामस्वरूप अन्य सामाजिक कार्यों को बल मिला।

प्रस्तावना :

भक्ति कालीन हिन्दी साहित्य का स्वर्णयुग है। इस युग में लिखा गया साहित्य उत्कृष्ट था, क्योंकि इसमें भक्ति एवं जागरण दोनों का पुट था। भक्ति का संबंध हृदय से है जबकि जागरण का संबंध मस्तिष्क से है। लेकिन भक्ति कालीन जागरण में हृदय एवं मस्तिष्क दोनों का योग है अतः हम कह सकते हैं कि भक्ति कालीन जागरण में संत कवियों के हृदय की पवित्रता एवं विचारों की उदात्तता प्रकट हुई है।

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के अनुसार ''श्रद्धा और प्रेम के योग का नाम भक्ति है।''[1] भक्ति में अपने इष्ट के प्रति श्रद्धा एवं प्रेम का भाव उमड़ता है। भक्ति मानव समाज की धरोहर है। इसका उपयोग

मनुष्य ने आत्मा की शुचिता एवं समाज की श्रीवृद्धि में किया। भक्ति भावना आने से मनुष्य में सद्भावना का विकास होता है और वह संसार के सभी प्राणियों में समभाव रखता है। सभी के प्रति प्रेम, दया, करूणा, एवं सहिष्णुता का भाव रखता है। वह समाज के सभी वर्गों के संपूर्ण विकास की बात सोचता है। जब साहित्य में ऐसी बातों का संयोजन हो जाता है तो वह साहित्यिक जागरण कहलाता है।

भक्तिकाल में भक्ति की दो धाराएँ थी एक सगुणभक्ति धारा तो दूसरी निर्गुण भक्ति धारा। दोनों धाराओं के कवियों के साहित्य में ईश्वरीय भक्ति एवं सामाजिक जागरण मिलता है। दोनों धाराओं के कवियों ने साहित्य के माध्यम से सामाजिक परिवर्तन एवं उत्थान की बात कही। वास्तव में वही कृति कालजयी होती है जिसमें समूचे मानव जाति के उत्थान का चिंतन होता है। यदि किसी कृति से केवल मनोरंजन होता हो वह कृति केवल मनोरंजन का साधन कहलायेगी, न कि साहित्य।

विवेचना :

साहित्य राष्ट्र की, समाज की, जीवन शक्ति की, पहचान होता है। साहित्य के अभाव में राष्ट्र और समाज अज्ञानता के अंधकार में मुर्दा बनकर जीवित रहते हैं। भक्तिकालीन साहित्य भी जागरण का अक्षय स्रोत है जो सभी कालों में राष्ट्र तथा समाज के लिये उपयोगी है। संत कबीर भक्ति कालीन समाज के सबसे बड़े जागरणकर्ता थे, उन्होंने जीवों को जाग्रत करते हुए कहा –

''जागि रे जीव जागि रे
चोरन कौ डर बहुत कहत हैं,
उठि उठि पहरै लागि रे।''[2]

''जागहु रे नर सोबहु कहा।
जम बटपारै रूँधे पहा।।
जागि चेति कछू करौ उपाइ,
मोटा बैरीं है जमराइ।।
संत काग आये बन मांहि,
अजहूँ रे नर चेतै नांहि।।
कहैं कबीर तबै नर जागै,
जम का डंड मूंड मैं लागै।।''[3]

संत नामदेव ने भी सांसारिक मनुष्यों को समझाते हुए कहा –

''जाग रे जाग कहा भुलाना।
आगे पीछे जाना ही जाना।।
दिवस चार का गोबली बासा।
ता मैं तो क्यों आवै हासा।।
इह भ्रम लाग कहा तूं सोवे।

काहे कूं जनम बाद ही खोवै।।''[4]

संत रैदास ने भी मनुष्यों में ईश्वर की ओर ध्यान लगाने को प्रेरित किया–

का तूँ सोवै जाग दिवाना।
झूठी जिउन सत्र करि जाना।
जिन जनम दिया सो रिजक उमड़ावै,
घट–घट भीतर रहट चलावै।''[5]

भक्तिकालीन साहित्य में जहाँ एक ओर संत कवियों ने ईश्वर की ओर ध्यान आकृष्ट किया, वहीं, सामाजिक बुराईयों को दूर करने का आंदोलन ही चला दिया। भक्ति आंदोलन और व्यक्ति आंदोलन साथ–साथ चला। जहाँ एक ओर भक्ति आंदोलन ने समाज के सभी वर्गों के लिए भक्ति का मार्ग खोला, वहीं भक्ति आंदोलन ने प्रत्येक व्यक्ति के मान–सम्मान और समानता की लड़ाई लड़ी।

संत नामदेव, कबीर, रैदास एवं नानक आदि संतों ने भक्ति के साथ–साथ समाज में व्याप्त बुराईयों को दूर करने का प्रयास किया। संत रैदास ने जाति–पाति के भेदभाव को तुच्छ माना–

''रविदास इक ही नूर ते,
जिमि उपज्यो संसार।
ऊॅच नीच किह विध भये,
ब्राह्मण अरू चमार।''[6]

संत रैदास ने भक्तिकाल में ही स्वाधीनता की पहल पैदा कर दिया था–

''पराधीनता पाप है, जान लेहु रे मीत,
'रविदास' दास पराधीन सों कौन करै है पीत।।''[7]

संत नामदेव ने भी ऊंच–नीच का भेदभाव मानने वालों से प्रश्न किया–

''नाना वर्ण गउआ, उनका एक वर्ण दूध।
तुम कहा के ब्रह्मन' हम कहाँ के सूद?''[8]

भक्ति कालीन सभी संतो एवं कवियों ने एक आदर्श समाज की कल्पना की। कुछ कवि समाज की परंपरागत व्यवस्था के अनुसार सामाजिक आदर्श को स्थापित करना चाहते थे जबकि कुछ कवि पुरानी सामाजिक व्यवस्था में परिवर्तन कर एक उत्कृष्ट समाज एवं आदर्श को स्थापित करना चाहते थे। गोस्वामी तुलसीदास जी ने अपने समय में स्थापित वर्ण व्यवस्था के अनुसार समाज को सर्वदा देखना चाहते थे, जिस व्यवस्था में समाज का कुलीन वर्ग अन्य वर्गों पर जबर्दस्त शासन करता था और अन्य वर्ग निरंतर उनके शोषण का शिकार बना रहता था। तुलसीदास वेद विहीन ब्राह्मण को भी पूज्य घोषित करते हैं और सर्वगुण प्रवीण सूद्र को त्याज्य मानते हैं :

''सापित ताड़ित पुरूष कहंता।
विप्र पूज्य अस गावहिं संता।।
पूजिअ विप्र सील गुण हीना।

सूद्र न गुन गन ग्यान प्रवीना।।''[9]

इसके विपरीत निर्गुण संतों नामदेव, कबीर एवं रैदास आदि ने पुरानी वर्ण व्यवस्था पर आधारित सामाजिक नियमों, पाखण्डों एवं कुरीतियों का जमकर विरोध किया और एक संपूर्ण स्वस्थ समाज को स्थापित करने की भूमिका तैयार की। संत रैदास जी ने जाति व्यवस्था पर व्यंग्य करते हुए कहा :

''जाति ते कोई पद नहिं पहुँचा,
राम भगति विसेख रे।
खटक्रम सहित जे बिप्र होते,
हरि भगति चित दृढ़ नाहिं रे।''[10]

उपसंहार :

इस प्रकार स्पष्ट है कि साहित्य और समाज का गहरा सम्बन्ध है। साहित्य समाज के निर्माण में योगदान देता है जिस प्रकार सूर्य की किरणों से जगत में प्रकाश फैलता है, उसी प्रकार साहित्य के आलोक से समाज में चेतना का संचार होता है। साहित्य मे समाज को बदलने की शक्ति निहित होती है। साहित्य अंध विश्वासों, रूढ़ियों एवं सड़ी–गली मानसिकता को दूर कर समाज को नई रोशनी प्रदान करता है। प्रेम, दया, सेवा, एवं उपकार जैसे मानवीय गुणों का संचार समाज में साहित्य के माध्यम से ही हो सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :

1. आचार्य रामचंद्र शुक्ल – चिन्तामणि भाग–1, पृष्ठ–26, इंडियन प्रेस इलाहाबाद।
2. भवगत स्वरूप मिश्र – कबीर ग्रंथावली–पृष्ठ 414–विनोद पुस्तक मंदिर आगरा।
3. भवगत स्वरूप मिश्र – कबीर ग्रंथावली–पृष्ठ 415–विनोद पुस्तक मंदिर आगरा।
4. कृ. गो. वानखेड़े गुरूजी–संत नामदेव तथा उनका हिन्दी साहित्य पृ. 170 प्र. सूचना और प्रसारण मंत्रालय भारत सरकार।
5. बेलवीडियर प्रिंटिग वर्क्स–रैदास की वाणी, पृष्ठ 27।
6. पं. मधुसूदन शर्मा–संत रविदास, पृष्ठ 53 प्र. नई सदी बुक हाउस दिल्ली।
7. पं. मधुसूदन शर्मा–संत रविदास, पृष्ठ 54 प्र. नई सदी बुक हाउस दिल्ली।
8. डॉ. निशिकान्त मिरजकर – संत नामदेव : जीवन और साहित्य –पृ. 10 प्रकाशन संत नामदेव जागृति मिशन हरियाणा।
9. तुलसीदास – रामचरित मानस (अरण्यकाण्ड) पृ. 650 गीता प्रेस गोरखपुर।
10. वेलवीडियर प्रिंटिंग वर्क्स, रैदास की वाणी, पृ. 22।